''क्या नीतीश कुमार बिहार को पटरी पर ला सकते हैं?''

मोहन गुरुस्वामी

बिहार में लालू प्रसाद यादव के नेतृत्व वाले गठबंधन की पराजय मेरे लिए थोड़ी चौंकाने वाली थी पर बहुत ज्यादा नहीं। राजग की इस तरह की चुनावी जीत मेरे लिए काफी आश्चर्यजनक थी। चुनावी पंडित इसे विकास एवं बदलाव के लिए मतदान कह रहे हैं लकिन ऐसी चुनावी विजय पराजय कभी–कभार होती है। हम जानते हैं कि केवल कुछ लोग ही वास्तव में तर्कपूर्ण एवं ठोस कारणों के लिए मतदान करते हैं। अधिकांश जनता आदतानुसार और बहुत छोटे तथा हालिया घटनाओं को ध्यान में रखकर अपना मतदान करती है। अगर ऐसा नहीं होता तो हमारे नेता विशेषकर भीतरी हिन्दी प्रदेश के– जातीय गणित को पहले से इतने निश्चिंत नहीं हो सकते थे।

इस परिणाम को देखकर ऐसा लगता है कि पारंपरिक मुस्लिम–यादव गठजोड़, जिन्होंने कुल मतदान का एक तिहाई मतदान किया बड़े पैमाने पर राजद गठबंधन के साथ अंत तक जुड़ा रहा। मैं इस विश्लेषण को छोड़ता हूँ कि ऐसा क्यों और किन कारणों से हैं, मुझे विश्वास है कि इसके बहुत सारे कारण होंगे। इस प्रकार का विश्लेषण बहुत काम का नहीं है और यह केवल जातियों एवं संप्रदायों के बीच मौजूद प्रतिरोध को और बढ़ाएगा। कुछ लोग यह कह सकते हैं कि अब यादव और मुस्लिम अलग–थलग पड़ जायेंगे। बिहार में इससे ज्यादा भी हो सकता है। ऐसी स्थितियाँ नई सरकार की समस्याओं को और बढ़ाएँगी। इस प्रकार स्पष्ट है कि नीतीश कुमार के सरकार की पहली और सबसे जरूरी काम मुसलमानों और यादवों के मन से अलगाव की जमी हुई भावना को दूर करना और बिहार के पुनर्निर्माण के काम में उन्हें साझेदार बनाना है।

लालकृष्ण आडवानी की अपेक्षाकृत सौम्य एवं प्रबुद्ध नेतृत्व से अलग राष्ट्रीय स्वयं सेबक संघ के आक्रामक नेतृत्व वाली भाजपा सहयोगी, जो सारे समय उनके साथ होगी ओर मजबूत रूप में होगी, उसकी एकांगी माँगों से बचना होगा।

लेकिन ऐसा तभी हो सकता है जब नीतीश कुमार अभी से ही उनलोगों को दृढ़तापूर्वक यह समझाएँ कि यह जनसहयोग हमारे नेतृत्व (और विकास कार्यो) के लिए था न कि मंदिरों के निर्माण और पुराने हिसाब बराबर करने के लिए। केवल इसी आधार पर नीतीश कुमार बिहार का पुनर्निर्माण कर सकते हैं। निश्चित रूप से करने की तुलना में ऐसा कहना बहुत आसान है।

बिना किसी विवाद के बिहार भारत का सबसे गरीब और पिछड़ा राज्य है, तथ्य इसके प्रमाण हैं। लेकिन जो बात इसे सबसे अलग करती है वह यह है कि बिहार भारत का एकमात्र राज्य है जिसके सभी क्षेत्रों में गरीबी का वितरण समान रूप से अपने अधिकतम स्तर (46–70 प्रतिशत) पर है। बिहार की प्रति व्यक्ति वास्तविक वार्षिक आय 3650 रुपया है जो राष्ट्रीय औसत 11,625 रु. का लगभग तिहाई है। बिहार ही एकमात्र भारतीय राज्य है जिसकी अधिकांश जनसंख्या (52.47 प्रतिशत) निरक्षर है।

लेकिन बिहार के लिए कुछ सकारात्मक पक्ष भी हैं। इसकी शिशु मृत्यु दर 62 प्रति हजार है जो कि 66 प्रति हजार के राष्ट्रीय औसत से कम है। महत्वपूर्ण बात यह है कि न केवल यह औसत उत्तर प्रदेश (83) और उड़ीसा (91) से कम है बल्कि आंध्र प्रदेश और हरियाणा के (दोनों के लिए 66) से भी बेहतर है। जीवन प्रत्याश के मामले में भी एक औसत भारतीय पुरुष (62.4 वर्ष) की तुलना में औसत बिहारी पुरुष एक वर्ष अधिक (63.6 वर्ष) जीता है। राज्य के लोगों का जीवन काल पिछले तीन वर्षों की तुलना में बेहतर हुआ है।

बिहार के पास 7.04 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि है और 1679 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर की इसकी उपज है। 1739 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के राष्ट्रीय औसत से कम है वहीं यह छह अन्य राज्यों की तुलना में बेहतर है जिसके अंतर्गत कर्नाटक और महाराष्ट्र जैसे बड़े कृषक राज्य शामिल हैं। इसके बावजूद संपूर्ण सामाजिक–आर्थिक स्तर के मामले में बिहार का चेहरा निश्चित रूप से काफी भयावह है।

पिछले तीन वर्षों में प्रति व्यक्ति भारतीय विकास खर्च 7935.00 रु रहा है, इसके विपरीत बिहार में यह खर्च राष्ट्रीय स्तर के आधे से भी कम 3633 रु. है, जबकि विकास खर्च राज्य की राजकोषीय भागीदारी सहित कई कारकों पर निर्भर करता है। यहां कोई तर्क यह स्पष्ट नहीं कर सकता कि 10वीं योजना में बिहार को प्रति व्यक्ति विकास खर्च से दूर क्यों रखा गया। इस दौरान इसे मात्र 2533. 80 दिया गया जो कि गुजरात (9289.10), कर्नाटक (8260.00 रुपये) और पंजाब (7681.20 रु.) के एक तिहाई से भी कम है।

सरल लेकिन ठोस आर्थिक तर्क हमें बताता है कि एक बार जब कोई क्षेत्र पिछड़ता है तो वह केवल पिछड़ता ही नहीं बल्कि लगातार और कमजोर होता चला जाता है। तब वह अपनी प्रगति और विकास के लिए बड़ी मात्रा में निवेश की माँग करता है। यह बहुत कुछ एक कमजोर या बीमार बच्चे को परिवार में बेहतर पोषण देने और उसका अतिरिक्त ध्यान रखने के समान है। हम जानते हैं कि केवल जन्तु जगत में ही योग्यतम की उत्तरजीविका (बलशाली ही राज करेगा) की नीति लागू है जहां कमजोर और अशक्त की उपेक्षा और तिरस्कार होता है और वे मार डाले जाते हैं। लेकिन यहां हम पाते हैं कि बिहार की लगातार उपेक्षा हो रही है और उसे किनारे लगाया जा रहा है। इसकी आर्थिक–सामाजिक स्थिति अतिरिक्त सहायता की मांग करती है लेकिन इसके उचित मांग को भी बकाया रखा जा रहा है।

बड़ी सफाई से प्रति व्यक्ति निवेश में साफतौर से केन्द्र सरकार द्वारा निरंतर बिहार को कोष से वंचित/दूर रखा गया है। यह कहने की जरूरत नहीं कि लंबे समय से केन्द्र सरकार से राजनीतिक रूप से अलग रहने की बिहार को कीमत चुकानी पड़ी है जिसका अंतिम हिस्सा 1992 से 2004 तक बारह वर्षों का था। पिछले एक वर्ष से केन्द्र में बिहार की सहयोगी सरकार थी और माना जाता था कि वह पटना की शासन व्यवस्था में जरूरी सुधार करेगी। लेकिन अब फिर से पुरानी स्थिति आ गयी है।

बिल्कुल साफ है कि जो राज्य केन्द्र से बेहतर राजनीतिक तालमेल बनाए रखते हैं। वे केन्द्रीय सहायता के मामले में बेहतर स्थिति में होते हैं। केन्द्र से लंबे समय तक जुड़े रहे आन्ध्र प्रदेश का हम उदाहरण ले सकते हैं। केन्द्र सरकार से 2000–2005 के दौरान अनुदान पाने के मामले में, बिहार केवल 10833 करोड़ रुपये की दयनीय रकम प्राप्त किया जबकि आंध्र प्रदेश को 1554200 करोड़ रुपये मिले। बिहार कर्ज प्राप्ति के मामले में भी केन्द्र से उपेक्षित रहा है। 2000–02 में यह केवल 2849.60 करोड़ प्राप्त किया जबकि आंध्र प्रदेश को 6902.20 करोड़ का कर्ज मिला। केवल केन्द्रीय करों की प्रति व्यक्ति साझेदारी के मामले में ही बिहार को अच्छे से याद किया जाता है। केन्द्र सरकार की यह घोर उपेक्षा 2001 में बिहार द्वारा प्राप्त प्रति व्यक्ति केन्द्रीय सहायता (केन्द्र प्रदत्त अतिरिक्त सहायता, अनुदान एवं कुल ऋण) के रूप में भी दिखाई पड़ती है। जबकि आंध्र प्रदेश ने प्रति व्यक्ति 625.50 रु. प्राप्त किया वहीं बिहार को केवल 276.60 रु. मिला।

बिहार के आर्थिक अवरोधन का परिणाम राज्य के चार बड़े विकास क्षेत्रों में अत्यंत कम निवेश के रूप में भी देखा जा सकता है। बिहार में सड़क पर प्रति व्यक्ति खर्च 44.60 रु. है जो कि राष्ट्रीय औसत 117.80 रु. का 38 प्रतिशत है। इसी प्रकार सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण पर बिहार प्रति व्यक्ति के हिसाब से 104.40 रु. खर्च करता है जबकि राष्ट्रीय औसत 199.20 रु. का है।

अब प्रश्न यह है कि बिहार किस सीमा तक प्रगति कर सकता है? यदि बिहार को प्रति व्यक्ति भारतीय औसत के हिसाब से धन दिया जाता तो यह दसवीं पंचवर्षीय योजना के लिए 48216.66 करोड़ रु. होता जबकि उसे केवल 21000 करोड़ रु. दिय गया। यह प्रवृत्ति शुरुआती पंचवर्षीय योजनाओं से ही दिखायी पड़ती है और पहली योजना से आज तक की कुल कमी 50,000 करोड़ से अधिक की होगी जिसे पाना अब लगभग असंभव है। अगर यह प्रचलित राष्ट्रीय जमा अनुपात का लाभ पाता तो उस स्थिति में इसे बैंक से कर्ज के रूप में 44ए 830 करोड़ मिलता जबकि इसने केवल 5635.76 करोड़ प्राप्त किया।

इसी प्रकार वित्तीय संस्थानों से प्रति व्यक्ति 9828.80 रु. की राष्ट्रीय औसत की तुलना में बिहार को प्रति व्यक्ति 551.60 रु. की नगण्य सहायता मिली। बिहार में किसी औद्योगिक सक्रियता का लगभग न होना इस स्थिति का शायद एक कारण हो सकता है, लेकिन नाबार्ड के अल्प निवेश के लिए कोई कारण समझ में नहीं आता। 2000 से 2002 के दौरान बिहार को नाबार्ड से केवल 119 रु. को प्रति व्यक्ति अल्प सहायता मिली जबकि आंध्र प्रदेश को 164.80 रु. और पंजाब को 306.30 रु. प्राप्त हुए। कोई भी व्यक्ति यह तर्क नहीं दे सकता कि बिहार में कृषि नहीं होती। यदि वित्तीय संस्थान प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय औसत के हिसाब से भी निवेश करते तो राज्य 40,020.51 करोड़ प्राप्त करता जबकि वास्तव में इसने मात्र 4571.59 करोड़ का निवेश प्राप्त किया। बिल्कुल स्पष्ट है कि बिहार को न केवल उसके उचित अधिकार से वंचित रखा गया बल्कि भारत के सबसे गरीब और सबसे पिछड़े राज्य बिहार से पूंजी का बाहर की ओर पलायन भी हुआ। वास्तव में यह क्रूर विडंबना है। इस प्रकार पूंजी का चक्रण पूरी तरह नष्ट/ध्वस्त होता है। यह पूंजी दूसरे क्षेत्रों में आर्थिक कार्यों के निवेदित की गयी कर प्राप्ति को इससे बढ़ावा मिला और फलतः वहाँ विशाल मात्रा में केन्द्रीय सरकार की मदद मिली।

यदि कोई कठोर शब्दों में इसे कहे तो वह कह सकता है कि बिहार का सुनियोजित ढंग से शोषण हुआ है और केन्द्रीय निधि में इसकी हिस्सेदारी के अधिकार की अवहेलना कर इसे नष्ट किया गया है।

तब नीतीश का काम स्पष्ट हो जाता है। उन्हें किसी भी हालत में केन्द्र से अधिक धन प्राप्त करना चाहिए। यहां तक कि जब यू.पी.ए. सरकार अपने अस्तित्व के लिए दयनीय ढंग से राजद पर निर्भर थी तब भी इसके लालू प्रसाद धन पाने में सफल नहीं हो सके। यहां असम जिसमें मनमोहन सिंह को राज्य सभा में भेजा है का उदाहरण देखा जा सकता है। पिछले वर्ष इसने केन्द्र से 15700 करोड़ से अधिक का अतिरिक्त अनुदान और सहयोग प्राप्त किया जो पिछले वर्ष के मुकाबले 7000 करोड़ से अधिक था। दूसरी तरफ प्रधानमंत्री द्वारा बिहार के लिए विशेष योजना की घोषणा के बावजूद बिहार ने पिछले वर्ष से, मात्र 600 करोड़ अधिक

राशि के साथ 10700 करोड़ प्राप्त किया। इस प्रकार बिहार की प्रति व्यक्ति विकास खर्च पहले वर्ष मात्र 1211 रु. था जबकि पूरे देश के लिए यह 2650 रु. था। इसने बिहार को उस गर्त में पहुंचाया जिस स्थिति में वह इस समय है। बिहार कल तक केन्द्र से जितना पाता था कम से कम उसके दुगने की उसे जरूरत होगी। बिहार के लिए इसे प्राप्त करने के लिए नीतीश कुमार को नई दिल्ली से राजनीतिक रूप से असहयोग की भारी बाधा को पार करना होगा। ऐसा करने के लिए नीतीश को एड़ी–चोटी का पसीना एक करना होगा फिर भी क्या भाजपा उन्हें ऐसा करने का अवसर देगी।

अपनी दावेदारी को मजबूती से रखने के लिए नयी सरकार को सबसे पहले राष्ट्र को भरोसा दिलाना होगा कि पहले जो बिहार में प्रचलित था वैसा अब नहीं होगा। इसके लिए पहली प्राथमिकता लोक प्रशासन को सुधारने की होगी। इसके लिए नौकरशाही को राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त रखना होगा जो अपराधियों के द्वारा या अपराधियों के लिए लगातार हस्तक्षेप से छुटकारा पाए बिना नीतीश के लिए संभव नहीं होगा। स्थानांतरण और तैनाती, अफसरशाही पर नियंत्रण रखने के ये दो ऐसे अस्त्र हैं जो उसे आज्ञाकारी औजार में बदल देते हैं। इसे राजनेताओं के अधिकार से जरूर मुक्त करना चाहिए। अधीनस्थ नौकरशाहों और निर्वाचित राजनेताओं के बीच जो मजबूत संबंध विकसित हुआ है उसे भी किसी भी हालत में तोड़ना होगा।

ऐसा करने के लिए नितीश को तत्काल बिहार के 5–6 सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक वरिष्ठ एवं अनुभवी अफसरों का चयन कर एक प्रशासन मंडल स्थापित करना चाहिए जो विभिन्न एजेंसियों, विभागों और सभी जिलों के कार्यों का निरीक्षण करे। यह मंडल या बोर्ड जिला स्तर से निचले स्तर तक की विभागीय एवं व्यक्तिगत उपलब्धियों की लगातार समीक्षा भी करे। अधिकारियों के पद एवं स्थानांतरण का अधिकार विशेष रूप से इस बोर्ड के पास निहित होना चाहिए। बोर्ड के अध्यक्ष को मुख्य सचिव स्तर का अधिकारी होना चाहिए और बोर्ड के सदस्यों का कार्यकाल पूरे दो से तीन सालों तक के लिए निश्चित होना चाहिए।

अधिकांश भारतीय राज्यों के पास एक राजस्व विभाग होता था जो कि बड़े पैमाने पर इस कार्य को पूरा करता था लेकिन राजनीतिज्ञों ने पाया कि ये बोर्ड उनके रास्ते का रोड़ा बन रहे थे और विरोध में फैसले लेते थे। ऐसे बोर्ड का निर्माण नीतीश को रोज–रोज के उन तनावों और अतिरिक्त कार्यों के बोझ से मुक्त करेगा जिनके होने से अच्छी सरकार का संचालन असंभव हो जाता। यदि नये मुख्यमंत्री फलते–फूलते स्थानांतरण उद्योग को नहीं संभाल पाए और इस पर नियंत्रण नहीं कर पाए तो बिहार में बदलाव की संभावना क्षीण हो जाएगी।

1952 में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के विख्यात अमेरिकी लोक प्रशासन विद्वान डॉ. पोल हेन्सन अप्लेवी और भारतीय लोक प्रशासनिक संस्थान ने विभिन्न राज्यों में लोक प्रशासन का मूल्यांकन कर प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के समक्ष विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत किया। अप्लेवी का अध्ययन यह बताता था कि बिहार भारत का सबसे अच्छा–प्रशासित राज्य है। पिछले 50 वर्षों में बिहार सभी दृष्टियों से गर्त में पहुंच गया है। अब उसके पास खोने के लिए सिर्फ गरीबी, भ्रष्टाचार और अव्यवस्था ही है। दूसरे शब्दों में कहें तो उसके पास खोने के लिए सिर्फ बेड़ियाँ हैं और पाने के लिए सारा संसार पड़ा है। लेकिन यह बड़े पैमाने पर राजनीतिक प्रतिबद्धता, इच्छाशक्ति और योग्यता की मांग करेगा। क्या नीतीश कुमार ये सब कर पायेंगे? हम इसे जल्दी ही जान लेंगे।

वैकल्पिक नीति केन्द्र (CPAS) ने बिहार की आर्थिक स्थिति का विस्तार से तुलनात्मक अध्ययन चार भागों में किया है। ये सब इसके वेबसाइट www.cpasind.com पर मौजूद हैं और मुफ्त में उपलब्ध हैं।